पं. गोपीनाथ कविराज के साहित्य में गुरु–शिष्य सम्बन्ध की महत्ता

एस. अलफिया अलवी*

डॉ. उपेन्द्र बाबू खत्री

Email Id- s.alfiyaalvi786@gmail.com

साँची बौद्ध–भारतीय ज्ञान अध्ययन विश्वविद्यालय साँची, रायसेन (मध्यप्रदेश)

DOI: https://doi.org/10.5281/zenodo.17562747

सार संक्षेपिका

प्राचीन काल से ही ज्ञान के विस्तार हेतु गुरु–शिष्य परम्परा का निर्वहन हो रहा हैं। गुरु–शिष्य संबंध एक अति महत्वपूर्ण विषयों में से एक हैं। परन्तु आज के युग में इस संबंध और परम्परा का निर्वहन धीरे–धीरे लुप्त होता दिखाई दे रहा हैं। गुरु–शिष्य की परम्परा सनातन संस्कृति या उससे भी पुराना भाषित होता हैं। गुरु–शिष्य का संबंध अन्य संबंधों की तरह नहीं हैं। यह एक अति पवित्र संबंध हैं। संसार में व्याप्त जितने भी संबंध हैं सभी का मुख्य उद्देश्य– "राग, द्वेष, लोभ, अहंकर इत्यादी की भावनात्मक पुष्टि" परिलक्षित हो रही हैं। परंतु गुरु–शिष्य संबंध का मुख्य उद्देश्य–"आत्मज्ञान की प्राप्ति, यथार्थ ज्ञान की प्राप्ति, सार्थक जीवन की समझ विकसित करना, मानव कल्याण के लिए परम्परा का प्रवाह बनाये रखना हैं।

अन्य क्षेत्रों की अपेक्षा, तंत्र एवं योग में गुरु–शिष्य संबंध की महत्वपूर्ण आवश्यकता होती है। क्योंकि ये प्रक्रियाएं प्रयोग एवं चेतना विस्तार पर आधारित होती है इस हेतु गुरु शिष्य को तंत्र एवं योग के मार्ग में आगे बढ़ने का रास्ता बतलाते हैं। बिना रास्ता जाने उस पर कार्य संभव नहीं। गुरु एक आध्यात्मिक शक्ति है और शिष्य उस आध्यात्मिक ज्ञान को कार्यान्वित करता हैं। इस संबंध के द्वारा चेतना विस्तार की प्रक्रिया को पूर्ण किया जाता हैं। यहाँ आत्मोन्नति की प्रक्रिया है जिसमे गुरु परमात्मा स्वरुप है। गुरु शक्ति की कृपा द्वारा मुक्ति का मार्ग प्रशस्त होता हैं, परन्तु शिष्य की चेतना द्वारा ही गुरु एवं गुरु की चेतना द्वारा शिष्य की प्राप्ति होती है। जिसमे गुरु द्वारा शिष्य को दीक्षा दे कर उसे कर्मबंधन एवं देहात्मबोध से मुक्त किया जाता है। गुरु–शिष्य स्वाभाविक संबंध है। अतः प्रस्तुत शोध पत्र में पं. गोपीनाथ कविराज के साहित्य में गुरु–शिष्य की महत्ता का विवेचन किया जाएगा।

कूट शब्द– तंत्र, योग, गुरु, शिष्य, चेतना।

* एम.एस.सी. विद्यार्थी (योग) साँची बौद्ध–भारतीय ज्ञान अध्ययन विश्वविद्यालय, साँची, रायसेन (मध्यप्रदेश).

साहित्य अवलोकन

1. कविराज, डॉ. पं. गोपीनाथ, (2014), दीक्षा, अनुराग प्रकाशन, वाराणसी

प्रस्तुत ग्रन्थ के अंतर्गत दीक्षा, गुरु–शिष्य पर प्रकाश डाला गया है। दीक्षा के मूल्य में जो तत्व है वह गुरु–शिष्य के मध्य संबंध से शुरू होता है। दीक्षा, शक्तिपात–रहस्य, गुरुतत्व, जपतत्व इत्यादि बिन्दुओं पर विस्तृत चर्चा प्राप्त होती है।

2. कविराज, म.म.पं. गोपीनाथ, (2012), क्रमसाधना, अनुराग प्रकाशन, वाराणसी

प्रस्तुत पुस्तक में विभिन्न विषयों पर चर्चा की गई है। गुरु को ज्ञानदाता कहा गया है एवं दीक्षा को आत्मसंस्कार का नामान्तर कहा गया है।

3. कविराज, डॉ. पं. गोपीनाथ, (2020), अनन्त की ओर, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी

इस ग्रन्थ में गुरुतत्व, गुरु–साक्षात्कार, गुरु–राज्य पर प्रकाश डाला गया है। साथ ही मुक्तावस्था, ध्यान–रहस्य, महायात्रा, गायत्री–ॐकार, शून्य–विहार, बौद्धगण का तांत्रिक योग आदि विभिन्न विषयों पर चर्चा प्राप्त होती है।

प्रस्तावना

अखण्डमण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरम्।
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्रीगुरुवै नमः।।

हम सब सागररूपी जीवन में भटके हुए यात्री की तरह हैं। अपने अस्तित्व को बनाए रखना के लिए हमें एक लक्ष्य, एक उद्देश, एक दिशा की आवश्यकता हैं। इस उद्देश की पूर्ति हेतु एक गुरु परम आवश्यक होते हैं।

तंत्र एवं योग, एक व्यवाहरिक पक्ष हैं। इस व्यवाहरिक पक्ष को सही तरह से क्रियान्वित करने हेतु गुरु की यहाँ महत्वपूर्ण भूमिका होती हैं। प्राचीन काल से ही ज्ञान के विस्तार हेतु गुरु–शिष्य परम्परा का निर्वहन हो रहा हैं। अन्य विषयों की तरह, गुरु–शिष्य संबंध एक अति महत्वपूर्ण विषयों में से एक हैं। सर्वप्रथम यह संबंध आत्मिक स्तर पर होता है, फिर धीरे–धीरे भावनात्मक एवं मानसिक स्तर पर उतरता हैं। गुरु–शिष्य में संबंध अनेक प्रकार से होते हैं। जिस प्रकार सामाजिक सम्बन्ध होते हैः माँ–बेटी, पिता–पुत्र, भाई–बहन, पति–पत्नी। सभी एक–दुसरे से जुड़े होते है एवं सुखी जीवन को प्राप्त करते है उसी प्रकार गुरु–शिष्य के मध्य सम्बन्ध होता है जो इन सभी सम्बन्धो से बिल्कुल परे है। अध्यात्मिक सम्बन्ध के धागे से बन्धे होते है। तंत्र में यह सम्बन्ध पूर्ण होता हैं। गुरु–शिष्य के संबंधो में सामाजिक एवं पारिवारिक दायित्वों के साथ सामंजस्य स्थापित होता हैं। विवेकचूड़ामणि में कहा है की "मनुष्य का जन्म, मोक्ष की इच्छा और संत–महात्माओं का सम्पर्क, ये तीनो मुश्किल से मिलते है, बल्कि भगवान या गुरु की कृपा से

ही मिलते है।"[32] तंत्र एवं योग में सारी स्राष्टि चेतना एवं ऊर्जा से परिवर्तन कर आंतरिक चेतना का विस्तार होता हैं।

शोध अध्ययन की आवश्यकता

वर्तमान शिक्षा जगत में गुरु एवं शिष्य का संबंध अति विचित्र परिलक्षित होता हैं। आधुनिक शिक्षा प्रणाली लॉर्ड थॉमस बबिंगटन मैकाले द्वारा 1830 के दशक में ली गई थी। जो गुरु–शिष्य के संबंधों को उजागर न करके नष्ट कर रही हैं। गुरु शिष्य संबंध को जानना हर क्षेत्र के अध्ययन अध्यापन के लिए आवश्यक हैं। परन्तु अन्य क्षेत्रों के मुकाबले इसे जानना योग एवं तंत्राधिगम के लिए अति आवश्यक हैं।

गुरु–शिष्य परम्परा तंत्र एवं योग विद्या में अग्रणी है, जिसमे पं. गोपीनाथ कविराज इस तत्व को ग्रहण करके इसका निर्वाहन करते है। इस परम्परा को जाना इस शोध पत्र की आवश्यकता है।

योग एवं तंत्राधिगम बिना गुरु शिष्य संबंध के कदापि संभव नहीं। परन्तु आज विश्वविद्यालय में योग एवं तंत्र का अध्ययन इस परंपरा से नहीं हो रहा हैं। बिना गुरु के प्रति निष्ठा के यह अध्ययन संभव नहीं हैं। योग एवं तंत्र जगत के लिए गुरु शिष्य की महत्ता अधिक परिलक्षित होती हैं। गुरुत्व एवं शिष्यत्व के अलावा अन्य कई चीजे हैं जो इस संबंध को बनाए रखती है, जैसे–"श्रद्धा, वीर, स्मृति, समाधि एवं प्रज्ञा।" अपने शास्त्र और गुरु के प्रति श्रद्धा से योग एवं तंत्र में अभिरुचि, कल्याणकारी भावना एवं मन में प्रसन्नता उत्पन्न होती हैं। श्रद्धा से ही साधना में उत्साह उत्पन्न होता है जिससे वीर्य के प्राप्ति होती हैं। जब श्रद्धा और वीर्य मिलते हैं तब स्मृति, जो जन्म जन्मांतर की है वह प्राप्त होती है और जब चित्त एकाग्र और स्थिर होने लगता है समाधि की प्राप्ति होती हैं। समाधि की प्राप्ति से ऋत आधारित प्रज्ञा प्राप्त होती हैं। इस प्रकार के कई अन्य गुण योग एवं तंत्र अधिगम के लिए अति महत्वपूर्ण हैं। साथ ही गुरु शिष्य संबंध केवल अध्यापन के लिए ही आवश्यक नहीं है अपितु यह सामाजिक, आध्यात्मिक, व्यक्तिक आदि जीवन के लिए भी हैं।

शोध पत्र के उद्देश्य

शोध पत्र का उद्देश्य पं. गोपीनाथ कविराज के साहित्य में गुरु–शिष्य सम्बन्ध की महत्ता को समझना एवं प्रस्तुत करना हैं।

1. गुरु–शिष्य के सम्बन्ध के महत्त्व को जानना।
2. वर्तमान समय में गुरु–शिष्य संबंध की आवश्यकता को जानना।
3. पं. गोपीनाथ कविराज के साहित्य तंत्र एवं योग में गुरु–शिष्य संबंध को जानना।

गुरु

गुरु, दो शब्दों से मिलकर बना है, गु= अंधकार, रु= प्रकाश अथार्त जो अज्ञानरूपी अंधकार के आवरण को ज्ञानरुपी प्रकाश की ओर ले जाए। "गुरु का ग अक्षर सिद्धि देनेवाला है, र पाप हरनेवाला है और

[32] जुलाई (2021), *योगविद्या,* बिहार योग विद्यालय, मुंगेर, बिहार

उकार अव्यक्त विष्णुरूप है। गुरु आत्मात्रितय (ब्रह्मा, विष्णु और महेश) से परे है।"[33] भारतीय साधना में गुरु का विशिष्ठ स्थान रहा है। गुरु एक स्वत शक्ति हैं। इस शक्ति को उत्पन्न नही किया जा सकता हैं। गुरुतत्व की उत्त्पत्ति साधक के कल्याण के लिए होती है। "गुरुतत्व सर्वकाल तथा सर्वदेश में साधक के लिए आराध्यरूप से प्रकट होता है।"[34] गुरु मात्र एक शरीर नही है गुरु प्रकाश स्वरूप है जिसका सानिध्य मात्र की प्राप्ति से साधक प्रकाशित हो जाता है। आत्मा अथवा चैतन्य ही गुरुतत्व का स्वरूप है। "प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से गुरुतत्त्व का प्रभाव सर्वत्र दृष्टिगोचर होता है।"[35]

गुरु शांत है, क्लेश तपसहिष्णु है, पवित्र है, दक्ष है, सुबुद्धिमान् है। गुरु आश्रमी है, ध्याननिष्ठ है, तंत्रमंत्रविशारद है, निग्रह–अनुग्रह में समर्थ है। उद्धार करने में और संहार करने में जो समर्थ है, ब्रह्माणोत्तम है, तपस्वी है, सत्यवादी है और गृहस्थ है[36]वही गुरु है। परन्तु अनेक साधक गुरु का चयन मात्र उनके व्यवहार और व्यक्तित्व को देख कर करते है और उनसे आकर्षित हो जाते है। यदि उनका व्यवहार कठोर, रुखा, अपमानजनक होता है तो उनसे दुरी स्थापित कर लेते है। गुरु भले ही भद्रतापूर्ण व्यवहार या डाँट–फटकार करें परन्तु उनका उद्देश्य शुद्ध है, तो वह सद्गुरु है।

ज्ञान प्राप्ति के लिए गुरु कृपा का पात्र बनकर ही आत्मज्ञान की प्राप्ति की जा सकती है। पूर्व इतिहास काल के गुरु श्री आदि शंकराचार्य, श्री रामकृष्ण परमहंस, पं. गोपीनाथ कविराज आदि द्वारा शिष्य पर आत्मिक शक्ति से दीक्षा दी। गुरु ज्ञान प्रदान करने के लिए शिष्य का वरण करते है, शिष्य पशु, वीर एवं दिव्य इन तीन भाव में होते है। जब वह इन भावो से ऊपर उठ कर दिव्य भाव की स्थिति में आते है तब दीक्षा या शक्तिपात की क्रिया प्रारम्भ होती है। गुरु साधना जगत में सूक्ष्म रूप द्वारा शिष्य का मार्गदर्शन करते हैं। "श्रीगुरु व्यक्त एवं अव्यक्तरूपेण समग्र विश्व में परिव्याप्त है।"[37] पूर्णब्रह्मा का गुरु रूप अव्यक्त है। "श्रीगुरु अचित्त, चित्त, ईश्वर एवं ब्रह्मास्वरूप इन चार तत्त्वो से उच्चतर तत्त्व है।"[38]

गुरु को केवल एक शिक्षक समझना योग एवं तंत्र की दृष्टि से यथोचित नहीं है। शिक्षक या प्राध्यापक केवल शिष्य को ज्ञान प्रदान कर सकते है, परन्तु गुरु, शिष्य को ज्ञान के साथ–साथ अन्तः ज्ञान भी प्रदान करते है जिसकी सहायता द्वारा शिष्य आत्मसाक्षात्कार कर पाता हैं।

शिष्य

शिष्य, श्रद्धा की मुहूर्त हैं। जिस समय वह तंत्र का अभ्यास करता है तब वह चेला कहलाता है। शिष्य, गुरु के प्रति पूर्ण समर्पित होता हैं। शिष्य में तीन गुण व्याप्त होते है– ईमानदारी, श्रद्धा और आज्ञाकारिता। वह गुरु के द्वारा दिये हुए आदेशो को बिना किसी सोच–विचार किये उस कार्य में कार्यरत हो जाता हैं।

---

[33] अवस्थी रमेशचन्द्र, (2014), *तंत्राचार्य गोपीनाथ कविराज और योग–तंत्र–साधना,* विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी

[34] कविराज, डॉ. पं. गोपीनाथ कविराज, (2020), *अनन्त की ओर,* विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी

[35] कविराज, डॉ. पं. गोपीनाथ कविराज, (2020), *अनन्त की ओर,* विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी

[36] अवस्थी, रमेशचन्द्र, (2014), *तंत्राचार्य गोपीनाथ कविराज और योग–तंत्र–साधना,* विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी

[37] कविराज, डॉ. पं. गोपीनाथ, (2020), *साधना–पथ,* विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी

[38] कविराज, म.म.पं. गोपीनाथ, (2015), *सनातन–साधना की गुप्तधारा,* विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी

जब गुरु कोई निर्णय लेता है तब शिष्य के समक्ष अन्य कोई विकल्प नही होता हैं। शिष्य, गुरु की आज्ञा का पूर्ण आत्मिकता के साथ पालन करता है मानो कोई अदृश्य शक्ति उसे उस कार्य के लिए प्रेरित कर रही हो। यदि शिष्य की चेतना में आज्ञा पालन ना करना इत्यादी विरोध होते है तो वह गुरु के कहे अनुसार तांत्रिक साधना एवं समाधी प्राप्ति इत्यादी साधनाओ में आगे बढते समय उसे अत्यधिक कठिनाईयों का सामना करना पड़ता हैं। शिष्य के अन्तःकरण में सफलता–असफलता का कोई विशेष महत्त्व नही होता हैं। उसके अन्दर गुरु के प्रति कोई भावनात्मक, बौद्धिक या मानसिक भक्ति नही होती, वह वास्तविक, क्रियात्मक भक्ति के साथ गुरु के प्रति पूर्ण समर्पित होता हैं। नित्योत्सवः ग्रन्थ में शिष्य के लक्षण बताते हुए कहा है की "शिष्य सुंदर, स्वच्छ, सुमुख, गुरु के लिए सदासुलभ, श्रद्धालु, दृढ, भावयुक्त, जितेन्द्रिय, आस्तिक, दृढ–भक्तिमान, गुरु मंत्र और देवो के प्रति श्रद्धालु।"[39] शिष्य का आचरण गुरु के अनुकूल होना चाहिए, जिस प्रकार एक कार की स्टीयरिंग को हम जिस ओर ले जाते है वह उसी अनुरूप दिशा में जाती है। इसलिए यह आवश्यक है की साधना जगत में शिष्य गुरु का अनुसरण करे। चाहे गुरु कितना ही शिष्य को कठोर निर्देश क्यों ना दे, शिष्य को पूर्ण आज्ञाकारिता एवं श्रमपूर्वक उसका पालन करना चाहिए। एक शिष्य के लिए गुरु बहार और अन्दर दोनों जगह उपस्थित होते हैं। अन्तः गुरु हमारी शुद्ध आत्मा है, बहार उपस्थित गुरु हमें अन्दर के गुरु को प्राप्त करना का माध्यम है इसलिए बहः गुरु उतना ही आवश्यक है जितना की अन्तः गुरु। "गुरु की शक्ति शिष्य में संचारित होती है। जब वह शिष्य गुरुपद प्राप्त करता है, तब अपने अनुगत शिष्य में इस शक्ति का आधार करता है।"[40]

गुरु–शिष्य संबंध

गुरु एवं शिष्य के बीचा का संबंध ठीक वैसे ही प्रतीत होते है मनो प्रकाश एवं प्रकश क्रिया। गुरु एक अध्यात्मिक शक्ति का स्त्रोत है, शिष्य उस शक्ति की अभिव्यक्ति। सतशिष्य होने पर सतगुरु स्वयं आ जाते है। गुरु–शिष्य का संबंध स्वाभाविक होता है। "जिस भूमि से श्रीगुरु त्रिगुणातीत होने पर शिष्य को प्रारम्भिक मन्त्रो का उपदेश प्रदान करते है, शिष्य के त्रिगुणाधीन होने के कारण दोनों का सम्बन्ध हो ही जाता है, यही गुरु की कृपा है।"[41] यह सम्बन्ध किसी धर्म, पंथ, जाति, रंग, रूप पर आधारित नही होता। यह श्रद्धा, पूर्वजन्म, पूर्वकर्म पर आधारित होता हैं, जिस प्रकार रामकृष्ण परमहंस एवं स्वामी विवेकानंद जी का था। गुरु–शिष्य दोनों वस्तुत एक ही हैं। इनकी चेतना एक–दूसरे से जुड़ी रहती हैं। गुरु एवं शिष्य का तंत्र एवं योग साधना में बड़ा ही महत्त्व हैं। गुरु–शिष्य पवित्र अध्यात्मिक संबंध के तार से बंधे होते हैं। जिस प्रकार एक गुरु के लिए शिष्य महत्त्वपूर्ण है, उसी प्रकार शिष्य के लिए गुरु। गुरु–शिष्य के मध्य एक गोपनीय एवं नजी सम्बन्ध होता हैं। "सतशिष्य हो तब सतगुरु आप ही आते है और सतगुरु हों

[39] सस्त्री, ए. महादेवा, (1948), *नित्योत्सावा उमनान्दनाथा,* ओरिएण्टल इंस्टिट्यूट, बरोदा

[40] कविराज, डॉ. गोपीनाथ, (2011), *सिद्धभूमि ज्ञानगंज,* भारतीय विद्या प्रकाशन

[41] कविराज, डॉ. पं. गोपीनाथ, (2020), *अनन्त की ओर,* विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी

तब सतशिष्य आप ही आयेगा।"[42] जिस प्रकार गुरु के बिना शिष्य अपना मार्ग से भटक जाता है उसी प्रकार शिष्य के बिना गुरु भी अपन मार्ग से भटक सकते हैं। जब शिष्य साधना जगत में प्रवेश करते है तब वह बहुत–सी ऐसी चीजो से अनजाना और अछुता रहता है तब उसे इन चीजो को जानने के लिए गुरु की आवश्यकता पड़ती है क्यूकि शिष्य गुरु को और गुरु शिष्य को भली प्रकार से जानते हैं। शिष्य का शरीर, मन, आत्मा सब कुछ गुरु के लिए जाना पहचाना होता हैं। गुरु के वचन अनुसार साधन करने से अनायास ही साधना में सफलता प्राप्त होती हैं। गुरु के चयन उनके कर्म, ज्ञान, एवं व्यवहार के अधार पर करना चाहिए। जब गुरु के द्वारा दो व्यक्तियों के बीच एक सामान व्यवहार होता हैं, वह कभी भेद भाव नही रखते। जब गुरु ऐसे होते है तब यह फर्क नही पड़ते है की गुरु कठोर है की कोमल। बहुतयक लोग कोमलता को प्राथमिकता देते है, परन्तु तंत्र एवं योग में यह आवश्यक नही है, क्यूकि वह समतव पर अधिक बल देते हैं। "गुरु–शिष्य परम्परा को सम्प्रदाय कहते है। दीक्षा द्वारा शिष्य सम्प्रदाय से युक्त होता है।"[43]जिसमे वहाँ पशु भाव से दिव्य में प्रवेश करता है।

निष्कर्ष

तंत्र के अनुसार पशु अथार्त जीवात्मा पाशरुपी बन्धन से बंधे होते हैं, गुरु के द्वारा किये गए शक्तिपात एवं साधना के मार्गदर्शन द्वारा शिष्य इस बन्धन से पूर्णरूप से मुक्त हो कर साश्वत एवं शुद्ध आत्मा बन जाता हैं, अथार्त अपनी मूल अवस्था को प्राप्त करते हैं। गुरु–शिष्य तंत्र एवं योग का मूल्य है जिसके द्वारा विद्या को सही दिशा प्राप्त होती है। गुरु–शिष्य संबंध यज्ञ के समान है जिसमे दोनों बलिदान करते है। गुरु अग्नि है शिष्य इस में खुदको तपाता है। जिसमे अहंकार का नाश अर्थात अहंकार भस्म हो जाता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. कविराज, डॉ. पं. गोपीनाथ, (2014), *दीक्षा,* अनुराग प्रकाशन, वाराणसी
2. कविराज, म.म.पं. गोपीनाथ, (2012), *क्रमसाधना,* अनुराग प्रकाशन, वाराणसी
3. कविराज, डॉ. पं. गोपीनाथ, (2011), *साधना–पथ,* विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी
4. कविराज, डॉ. पं. गोपीनाथ, (2021), *तत्त्वानुभुती,* विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी
5. अवस्थी, रमेशचन्द्र, (2014), *तंत्राचार्य गोपीनाथ कविराज और योग–तंत्र–साधना,* विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी
6. कविराज, म.म.पं. गोपीनाथ, (2018), *योगिराज विशुद्धानन्द प्रसंग तथा तत्त्व–कथा,* विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी
7. कविराज, डॉ. गोपीनाथ, (2011), *सिद्धभूमि ज्ञानगंज,* भारतीय विद्या प्रकाशन, दिल्ली वाराणसी भारत
8. कविराज, डॉ. पं. गोपीनाथ, (2020), *अनन्त की ओर,* विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी

[42] कविराज, डॉ. पं. गोपीनाथ, (2021), *तत्तावानुभुती,* विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी

[43] कविराज, डॉ. गोपीनाथ, (2011), *सिद्धभूमि ज्ञानगंज,* भारतीय विद्या प्रकाशन

9. कविराज, म.म.पं. गोपीनाथ, (2015), *सनातन–साधना की गुप्तधारा,* विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी

10. कविराज, डॉ. गोपीनाथ, (2021), *आत्मनिर्झर,* भारतीय विद्या प्रकाशन, दिल्ली वाराणसी भारत

Tripuri